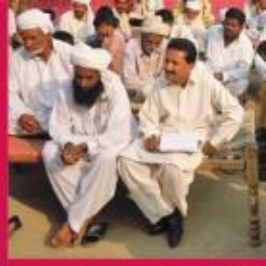

# मर्दानगी के बदलते स्वरूप

द्वितीय मेनइंगेज अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 2014, नई दिल्ली पर आधारित पत्रकारीय आलेख

# मर्दानगी के बदलते स्वरूप

द्वितीय मेनइंगेज अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 2014, नई दिल्ली पर आधारित पत्रकारीय आलेख

Men and Boys for Gender Justice

2nd MenEngage
Global Symposium 2014

सहयोगः स्विज़एड (SWISSAID)

प्रकाशनः सेन्टर फ़ॉर हेल्थ एण्ड सोशल जस्टिस (सीएचएसजे)

संपादकीय समीक्षाः रिमझिम जैन, सीएचएसजे

पृष्ठ सज्जा और मुद्रणः दृष्टि प्रिंटर्स, नई दिल्ली

प्रकाशितः 2015

© सभी अधिकार सेन्टर फ़ॉर हेल्थ एण्ड सोशल जस्टिस (2015) के पास सुरक्षित हैं

यह पुस्तिका केवल 'निजी वितरण' के लिए है

अधिक प्रतियों के लिए संपर्क करें –
सेन्टर फ़ॉर हेल्थ एण्ड सोशल जस्टिस
बेसमेंट ऑफ़ यंग वूमेन हॉस्टल नं. 2, एवेन्यू 21, जी ब्लॉक, साकेत, नई दिल्ली–110017
फोनः 91–11–26511425, 26535203; टेलीफैक्सः 91–11–26536041
ईमेलः chsj@chsj.org वेबसाइटः www.chsj.org; www.menengagedilli2014.net

# विषय सूची


1. पाकिस्तान में घरेलू हिंसा बढ़ने का कारण उग्रवाद 5

2. समानता की बात, संगीत, नाटक और फ़िल्मों के ज़रिए 8

3. महिला हिंसा का कारण मर्दवादी सोच 10

4. महिलाओं के सम्मान की अनोखी पहल 13

5. विज्ञापन में महिलाओं की बदली छवि 15

6. साझेदारी से बन रही है बातः
गाँवों में महिला–समानता में पुरुषों की बढ़ी भागीदारी 17

# परिचय

भारत में महिला के खिलाफ़ हिंसा के संदर्भ में 16 दिसंबर, 2012 की बलात्कार की बर्बर घटना के बाद पहली बार पुरुषों और महिलाओं में एकजुटता देखने को मिली। इस घटना ने हिंसा के संदर्भ में विश्व स्तर पर लोगों की मानसिकता और चेतना को बदलने का काम किया है।

हर तीन में से एक महिला हिंसा का शिकार होती है। कुल मिलाकर हिंसा का शिकार होने वाली महिलाओं की संख्या एक अरब से अधिक है और इस हिंसा का कारण भी पुरुष ही होते हैं। इसलिए हिंसा को खत्म करने के लिए यह ज़रूरी समझा जा रहा है कि पुरुषों को भी इस संघर्ष में शामिल किया जाए, पुरुष प्रधानता की ताकत को चुनौती दी जाए और उसमें सुधार किया जाए। पुरुषों को जोड़ने के मकसद से संयुक्त राष्ट्र संघ की विभिन्न संस्थाओं और मेनइंगेज ग्लोबल अलाइअन्स की मदद से मेनइंगेज अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी नवम्बर 10–13, 2014 में आयोजित की गई। इसमें राजधानी दिल्ली में विश्व के 95 देशों के 1200 प्रतिनिधि शामिल हुए।

दक्षिण अफ्रीका, नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, रवांडा, बोस्निया सहित अलग–अलग देशों से आए मानवाधिकार कार्यकर्ता, सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि, कलाकार और शिक्षाविद इस बात पर एकमत थे कि पुरुष और महिलाओं को अब पितृसत्ता के बोझ को त्याग कर ऐसे पुरुषत्व को अपनाना होगा जो महिला और पुरुष को साथ चलने और उन्हें अर्थपूर्ण असित्तव बनाने में मदद करे।

पाँच साल पहले मेनइंगेज ग्लोबल अलाइअन्स ने अपना पहला सम्मेलन का आयोजन रिओ डी जानीरियोए, ब्राजील में किया था, जिसका मकसद लैंगिक समानता के मुद्दे पर और महिलाओं के खिलाफ़ विश्व भर में बढ़ती हिंसा के खिलाफ़ पुरुषों को जोड़ने का माहौल तैयार करना था। इसी क्रम में इस बार गठबंधन ने भारत में अपनी साथी संस्था सेंटर फ़ॉर हेल्थ एंड सोशल जस्टिस के साथ मिलकर 'लैंगिक न्याय के लिए पुरुष और लड़के' पर फ़ोकस कर संगोष्ठी का गठन किया।

इस पुस्तिका के आलेख वरिष्ठ पत्रकार अन्नू आनंद के द्वारा लिखे गए हैं। यह कहानियाँ संगोष्ठी के मुख्य विषयों पर लड़के और पुरुषों के साथ किए गए पहल के आधार पर एक नया दृष्टिकोण का निर्माण करती हैं, जिसमें हम इस काम के दौरान कुछ संघर्ष, चुनौती एवं सफलताओं को देख सकते हैं।

# पाकिस्तान में घरेलू हिंसा बढ़ने का कारण उग्रवाद

*महिलाओं को समानता के स्तर पर लाने और उन्हें न्याय दिलाने में पाकिस्तान में धर्मगुरुओं और धार्मिक संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण क्यों है? एक रिपोर्ट*

पाकिस्तान में बढ़ते उग्रवाद (उर्दू में इसे मजहबी इन्तहाँ पसंदी कहा जाता है) के चलते जबरन विवाह और घरेलू हिंसा के मामलों में भी वृद्धि हो रही है। पाकिस्तान के दक्षिण पंजाब के इलाकों जैसे बहावलपुर और लाय्याह में संगठित रूप से उग्र विचारधारा का खतरा बढ़ता ही जा रहा है। उग्रवादी संगठन इन क्षेत्रों में अधिक सक्रिय हैं और वे युवाओं को उग्र इस्लामिक विचारधारा को अपनाने के लिए बाध्य कर रहे हैं। इस विचारधारा का फ़ोकस जिहाद, संप्रदायवाद और महिलाओं के अधिकारों को दबाना है।

दक्षिण पंजाब में खय्यबर पख्तुनख्वा के ग्रामीण इलाकों जैसे कोहिस्तान और बन्नू में उग्रवाद के बढ़ने के साथ ही जबरन विवाह और घरेलू हिंसा की घटनाएँ अधिक हो रही हैं। क्षेत्र के अंदरूनी इलाकों में यह समस्या और भी स्पष्ट दिखाई देती है। हालांकि यहाँ के शहरी इलाके जैसे हरिपुर और मानशेरा में मीडिया की घुसपैठ और शिक्षा के विस्तार के कारण यहाँ के समुदायों का धर्म के प्रति अधिक जागरूक नज़रिया है इसलिए यहाँ जबरन विवाह और घर में होने वाली हिंसा पर उग्रवाद का असर अपेक्षाकृत कम है। लेकिन जिन क्षेत्रों में कट्टर विचारधारा का फैलाव हो रहा है वहाँ महिलाओं के अधिकारों का हनन अधिक है।

स्रोतः नार्वेजिन चर्च एड ऐक्ट एलायन्स

## विचारों के निर्माण में धार्मिक संस्थान

ये तथ्य 'नॉर्वेजियन चर्च एड' द्वारा पाकिस्तान में बढ़ते उग्रवाद का जबरन विवाह और घरेलू हिंसा पर होने वाले प्रभाव को जानने के लिए किए गए एक अध्ययन में निकल कर आए। अध्ययन के मुताबिक धार्मिक नेता और धार्मिक संस्थान जैसे कि मस्जिद और मदरसा विभिन्न समुदाय के विचारों और व्यवहार को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सर्वे में शामिल अधिकतर लोगों का मानना था कि जो परिवार अपने बच्चों को मदरसे में भेजते हैं उनके परिवार की महिलाओं को शिक्षा पाने की अनुमति नहीं होती। ये महिलाएँ पर्दा की प्रथा का सख़्ती से पालन करती हैं। इन परिवारों में जबरन विवाह आम बात मानी जाती है।

सर्वे मुख्य चार ज़िलों बहावलपुर, लाय्याह, (पंजाब) मानसेहरा और हरिपुर (खय्बर पख्तुन्खावा) में समूह चर्चा और 250 लोगों के साथ बातचीत के आधार पर की गई। सर्वे के परिणामों में साफ है कि इमाम और धार्मिक नेता जबरन विवाह और घरेलू हिंसा का विरोध करते नहीं पाए गए। सर्वे बताती है कि यहाँ पर संस्कृति और पुरातन मान्यताओं के साथ धर्म की गलत व्याख्या के चलते महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा के अधिकार को मंजूरी मिल जाती है।

जबरन विवाह का अर्थ यहाँ अरेंज विवाह से नहीं है और न ही बाल विवाह को इसमें शामिल किया गया है। जबरन विवाह का अर्थ लड़के और लड़की की सहमति के बिना ही विवाह संपन्न करना है। पाकिस्तान में क्योंकि महिला को पुरुष के सम्मान के साथ जोड़ा जाता है इसलिए पुरुष की थोड़ी सी भी बेइज्ज़ती पत्नी, बेटी या बहन की पिटाई का कारण बन जाती है।

पाकिस्तान के इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल साइंस के मुताबिक वर्ष 2002 में करीब 90 फ़ीसदी विवाहित महिलाएँ खाना न बनाने, साफ़–सफ़ाई न रखने या बच्चे पैदा न करने और लड़के की बजाए लड़की

## बट्टा–सट्टा विवाह के खिलाफ़ आवाज़

महिलाओं को न्याय दिलाने वाली कुछ ऐसी महिला नेत्रियाँ हैं जो हर प्रकार की कठिनाइयों के बावजूद महिला हकों के लिए लड़ रही हैं। पठानी माई और आमो माई पाकिस्तान में जबरन विवाह के खिलाफ़ आवाज़ उठाने वाली ऐसी ही साहसी महिलाएँ हैं।

पाकिस्तान में पंजाब के बहावलपुर इलाके में रहने वाली पठानी माई गरीब परिवार से हैं। उसके तीन बेटे और एक बेटी है। इस इलाके के बहुत से परिवारों की तरह पठानी माई के परिवार में भी शादियाँ या तो बड़ों की मर्ज़ी से होती हैं या फिर अदला–बदली की रस्म में। अदला–बदली विवाह को यहाँ बट्टा–सट्टा कहा जाता है। इस परंपरा के तहत केवल लड़कियों की अदला–बदली होती है। यानी जिस परिवार से लड़की को बहू बना कर लाया जाता है उसी परिवार में घर की एक लड़की को ब्याहा जाता है। यदि ब्याह के समय लड़के ब्याहने वाले परिवार में कोई लड़की न हो तो निकाहनामा में परिवार इस बात की शपथ लेते हैं कि जो भी लड़की अब इस परिवार में पैदा होगी उसकी शादी वे उनके परिवार में करेंगे जहाँ से लड़के की बहू लाए हैं।

पठानी ने अपनी बेटी की शादी जिस परिवार में तय की उस परिवार में बदले में पठानी के परिवार को कोई लड़की देने के लिए नहीं थी। शादी की प्रक्रिया पूरी करने के लिए लड़के वालों को निकाहनामा में लिख कर देना पड़ा कि जब भी पठानी की बेटी के लड़की पैदा होगी उसकी शादी पठानी के घर में ही होगी। भले ही लड़के की उम्र कुछ भी हो।

पठानी के मुताबिक, "कुछ सालों के बाद जब मेरी बेटी के बेटी हुई तो मेरे बेटे ने ज़िद करना शुरू कर दी कि निकाहनामा की शर्त के मुताबिक उसकी शादी उसके साथ होनी चाहिए। हालांकि दोनों की उम्र में बहुत अंतर था। लेकिन मेरा बेटा उसे निकाहनामे की शर्त 'पेट लिखाई' की बलि बनाना चाहता था। मैंने इसका विरोध किया क्योंकि एक औरत और माँ होने के नाते मैं जानती थी कि मेरी बेटी की बेटी की शादी अगर मेरे बेटे से हुई तो यह कितना गलत होगा। मैंने इसके खिलाफ़ परिवार में आवाज़ उठाई। मेरे घर और परिवार के सभी लोग मुझ से नाराज हो गए।" लेकिन पठानी रुकी नहीं। उसने ठान ली कि परंपरा के नाम पर महिलाओं के साथ होने वाले इस अन्याय को वह अपने घर में नहीं होने देगी।

जिस समय घर में यह विवाद चल रहा था उसी दौरान पठानी ने रेडियो में जबरन विवाह के खिलाफ़ चल रहे अभियान के बारे में सुना। इस अभियान को सुनने के बाद उसके हौंसले और भी बुलंद हो गए। 'साउथ एशियन पार्टनशिप पाकिस्तान' (एसएपीपी) संस्था ने पाकिस्तान के कई इलाकों में लैंगिक अन्याय को खत्म करने के लिए स्थानीय स्तर की योजनाएँ शुरू की हैं। 'लोकल एक्शन टू कॉम्बैट जेंडर जस्टिस' के तहत यहाँ जबरन विवाह के खिलाफ़ रेडियो अभियान कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। पठानी का कहना है कि इन कार्यक्रमों ने उसके अंदर की माँ और औरत के स्वाभिमान को जगाने का काम किया। यहीं से प्रेरणा लेकर पठानी ने संस्था से संपर्क किया ओर उनकी मदद से घर में एक बच्ची के खिलाफ़ होने वाले इस अन्याय का विरोध किया। काफ़ी संघर्ष के बाद वह अपनी बेटी की बेटी अपने बेटे से बेमेल विवाह रोक पाने में तो सफल हो गई। लेकिन उसके बेटे ने पठानी का बॉयकाट कर रखा है। फिर भी पठानी कहती है कि उसे इस बात की खुशी है कि उसने अपनी बेटी और उसकी बेटी के साथ अन्याय नहीं होने दिया। अब पठानी माई अपने इलाके में महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा, जबरन विवाह को रोकने और उन्हें उत्तराधिकार के अधिकार दिलाने के काम में पूरी तरह जुट गई है। वह कहती है, "अब तो इस जबरन विवाह की परंपरा से अन्य महिलाओं को न्याय दिलाना ही मेरा मकसद बन चुका है।"

*पठानी माई*

इसी ज़िले की तहसील यजमान के छोटे से गाँव में रहने वाली आमो माई भी जबरन विवाह के श्राप को जीवन भर झेलने के बाद अब नहीं चाहती कि उसकी बेटियों का विवाह उनकी मर्ज़ी के बिना जबरन सगे संबंधियों से ही हो। आमो की शादी 12 वर्ष की आयु में कर दी गई। उस समय उसके दो भाइयों की शादी हो रही थी। अदला–बदली की रस्म के मुताबिक आमो को भी उसके ससुराल भेज दिया गया। उस समय उसके पति की उम्र केवल पांच साल की थी। जब उसका पति जवान हुआ, उसने आमो के साथ रहने से इंकार कर दिया क्योंकि वह उम्र में बहुत छोटा था। बाद में परिवार के दबाव के चलते वह आमो के साथ रहने को तैयार हुआ। आमो के नौ बेटे और एक बेटी हुई जिसमें छह बेटे जीवित नहीं बचे। उसके पति ने कई युवा लड़कियों से संबंध रखे पर वह कुछ न कर सकी क्योंकि अगर वह घर वापस जाती तो उसके भाई के जीवन पर भी इसका असर पड़ता। बच्चों को बड़ा करने के दौरान उसके पति ने उसे तलाक दे दिया। इसी दौरान वह गाँव में जबरन विवाह के खिलाफ़ चल रहे अभियान के संपर्क में आई। उसे तो जैसे अपने मर्ज की दवा मिल गई। वह कहती है, "मुझ से बेहतर कौन समझ सकेगा कि अदला–बदली की परंपरा और जबरन विवाह जीवन को कैसे नष्ट कर देता है।" अब आमो ने न केवल अपनी बेटी का जबरन विवाह नहीं होने देने की शपथ ली है बल्कि वह इस अन्याय के विरोध में खड़े हर अभियान में शामिल होने में खुशी महसूस करती है।

पैदा करने के लिए अपने पति द्वारा थप्पड़ों, मार–पीट और यौन उत्पीड़न का शिकार हुईं। अधिकतर मुस्लिम विद्वानों का मानना है कि विवाहित जीवन में पुरुष की भूमिका मुख्य होनी चाहिए। यह विश्वास पुरुष को महिलाओं को दबाने और उन पर नियंत्रण रखने को दृढ़ता प्रदान करने के साथ महिलाओं के प्रतिरोध को रोकने का काम करता है।

## धार्मिक ग्रंथों के नाम पर उत्पीड़न

सामाजिक आर्थिक कारणों के अलावा 12 फ़ीसदी लोगों का मानना था कि धर्म की कट्टर और उग्र व्याख्या मानने वाले परिवारों में जबरन विवाह अधिक होते हैं। परिणामों से स्पष्ट है कि जो लोग धार्मिक रूप से अधिक कट्टर हैं वे जबरन विवाह को स्वीकार करते हैं। महिलाओं के अधिकारों के हनन को न्यायसंगत ठहराने के लिए पितृसत्ता और इस्लाम की चयनित व्याख्या का इस्तेमाल किया जाता है। 38 फ़ीसदी उत्तरदाताओं का कहना था कि अपनी मर्ज़ी की शादी करना समाज और धर्म का उल्लंघन है।

हालाँकि इस्लाम महिलाओं के साथ बुरे बर्ताव की आज्ञा नहीं देता लेकिन फिर भी कुछ धार्मिक नेता कुरान के नाम पर घरों में पुरुषों द्वारा महिलाओं के उत्पीड़न को उचित ठहराते हैं। अक्सर घरेलू हिंसा की शिकार महिला घर के नज़दीकी संबंधियों के अलावा घर के बाहर किसी को हिंसा के बारे में नहीं बताती। 77 फ़ीसदी महिलाओं ने माना कि वे घर के बाहर किसी से हिंसा की शिकायत नहीं करतीं।

स्वात ज़िला जिसे सर्वे में बाद में शामिल किया गया, यहाँ पर अपनी मर्ज़ी से शादी करने वाले जोड़े को मारने की कोशिशों की घटनाएँ भी पाई गई। इस ज़िले में मलाल युसुफज़ई की घटना के बाद राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ध्यान आकर्षण के बावजूद स्थिति में सुधार नहीं हुआ। यहाँ पर सर्वे में शामिल अधिकतर लोगों का मानना था कि घरेलू हिंसा समुदाय की समस्या है और इसका मुख्य कारण यह है कि उनके समुदाय में पति मानते हैं कि ज़रूरत पड़ने पर हिंसा का इस्तेमाल करना उनका अधिकार है।

इन परिणामों से साफ़ है कि धर्म और संस्कृति की आड़ में महिलाओं को उत्पीड़ित किया जा रहा है। इसलिए महिलाओं को समानता के स्तर पर लाने और उन्हें न्याय दिलाने में धार्मिक नेताओं और धार्मिक संस्थानों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

*बहावलपुर में जबरन विवाह के खिलाफ़ अभियान*

# समानता की बात, संगीत, नाटक और फिल्मों के ज़रिए

*मर्दानगी के वास्तविक मायने युवाओं और पुरुषों को समझाने और पितृसत्ता की दकियानूसी परंपराओं की हकीकत स्पष्ट करने के मकसद से भारत सहित विभिन्न देशों में म्यूज़िक, नुक्कड़ नाटकों और फ़िल्मों और थिएटर जैसी तकनीकों का इस्तेमाल किया जा रहा है*

देश की राजधानी दिल्ली के इलाकों की विभिन्न कॉलोनियों में ऐसे कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं जिस में पुरुषों को मर्दानगी यानी कि 'पुरुषत्व' के नाकारात्मक स्वरूप को बदलने पर ज़ोर दिया जा रहा है। इन आयोजनों में यह समझाने की कोशिश की जा रही है कि बच्चों की देखभाल करना या घर का काम केवल महिलाओं के काम नहीं। न ही यह हकीकत है कि ऐसे काम करने वाले पुरुष 'मर्द' या 'मर्दानगी' का प्रतीक नहीं माने जाते।

## गानों के ज़रिए बदलाव

अंतर्राष्ट्रीय मेनइंगेज अधिवेशन में इसी क्रम में 'हिंसा मिटाएँ, प्यार फैलाएं: आज़ादी, न्याय और शरीफ़ मर्दानगी' के 14 गानों वाली एक सीडी जारी की गई। इसमें 13 गाने जानी–मानी महिलावादी कमला भसीन ने लिखे हैं। ये गाने उन पुरुषों को समर्पित हैं जो सामान्य पुरुषों से हट कर किसी भी प्रकार के काम करने में हिचक महसूस नहीं करते। जिनके लिए महिला और पुरुषों के लिए काम अलग–अलग नहीं। कमला भसीन का मानना है कि ज़रूरत पुरुषों का दिल बदलने की है दिमाग नहीं।

सीडी के सभी गाने लंबे समय से महिला अधिकारों की लड़ाई लड़ने वाली महिलाओं ने गाए हैं। इन गानों में हास्य के साथ व्यंग्य का पुट भी है। गाने के बोलों से ही स्पष्ट है कि किस प्रकार महिलाएँ विनम्र और देखभाल करने वाले पुरुषों को अधिक अच्छा मानती हैं। एक गाने के बोल हैं, "मियां मूछों वाले आउट ऑफ फ़ैशन हो गए; इसलिए मियां जी पूरे डेलिकेट हैं। मैं एमबीए हो गई पर सरजी ग्रेजुएट हैं।"

मित्तिका थिएटर की दूर्बा घोष का कहना है कि दिल्ली के विभिन्न इलाकों की 33 कॉलोनियों में ऐसे नाटकों का आयोजन किया गया जिनका मकसद पुरुषों की मानसिकता बदलने और महिला, मर्दानगी और समाजीकरण की बातों को स्पष्ट करना है। थिएटर कलाकार जया अय्यर के मुताबिक, "इस प्रकार के नाटकों का मकसद यह है कि लोग केवल दर्शक न बनें बल्कि इसका हिस्सा बनें। इसमें दिखाए गए विचारों को समझें और उस पर स्वयं चिंतन करें।"

*मित्तिका का अब बाकी चर्चा कार्यक्रम*

## नाटकों का मंचन

युवाओं के नाट्य समूह सड़क छाप ने मर्दानगी से जुड़े मुद्दे पर एक खास नाटक पेश किया जिसमें मर्दानगी को ताकत नहीं समानता के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसमें दर्शकों को भी शामिल होने का अवसर मिला। इस नाटक में दिखाया गया कि देर रात के समय एक बस स्टॉप में एक फूड स्टाल पर सारे पुरुष कुछ खा रहे हैं, ऐसे में एक महिला आती है और कुछ खाना चाहती है। यहीं पर दृश्य रोक दिया जाता है। फिर दर्शकों से आगे का दृश्य करने या समझाने के लिए कहा जाता है।

*"मूछों वाले आउट ऑफ़ फ़ैशन हो गए" – कमला भसीन*

थिएटर कार्यकर्ता कविता महतो का मानना है, "पितृसत्ता में लड़कियाँ ही उत्पीड़ित नहीं होतीं लड़के भी होते हैं।" उन्होंने बताया कि उनका एक दोस्त घुंघरू पहनना चाहता है लेकिन उसका परिवार लड़के का घुंघरू पहनना अच्छा नहीं समझता। मित्तिका, सड़क छाप और युवा एकता फाउंडेशन ने ऐसे चार नाटकों का मंचन किया। इसमें दर्शकों से संवाद बना, उन्हें मर्दानगी के मायने बदलने के अभियान में शामिल किया गया।

पश्चिमी दिल्ली के बलजीत नगर में करीब 250 लोगों की भीड़ कविता महतो के नाटक को देखने के लए एकत्रित हुई। पहले उस भीड़ के कुछ लोगों ने महिला और पुरुषों की दिखाई गई भूमिका पर ऐतराज़ जताया। लेकिन पूरा नाटक देखने के बाद उनका मन बदल गया।

इस बात में कोई दो राय नहीं कि भारतीय फिल्मों और मीडिया के अन्य माध्यमों में अक्सर महिलाओं के संदर्भ में गलत भाषा, मुहावरों और मान्यताओं का प्रदर्शन हेाता है। मर्दानगी को ताकतवर, भावहीन, कठोर और महिला से श्रेष्ठ के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। आम आदमी के जीवन में फ़िल्म संगीत और नाटक का काफ़ी प्रभाव रहता है। इसलिए संचार के विभिन्न माध्यमों के इस्तेमाल के ज़रिए और उनके कंटेंट को बदलकर ही महिला समानता की बात अधिक आसानी से समझाई जा सकती है। फ़िल्मों की लोकप्रियता को देखते हुए राजधानी में अधिवेशन के दौरान ग्लोबल फ़िल्म फ़ेस्टिवल का भी आयोजन किया गया।

इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ़ वीमेन इन रेडियो एंड टेलीविज़न इंडिया ने इसका आयोजन किया था। इसमें निकारगुआ, इस्रायल, मलावी, नेपाल, जापान, अफ़गानिस्तान और भारत की 70 डाक्यूमेंट्री, फ़ीचर फ़िल्में, म्यूजिक विडियो आदि थे। सभी का फ़ोकस मर्दानगी के गिर्द बहस बनाने पर था। इन फिल्मों में प्रदर्शित मर्दानगी संस्कृति और समाज के साथ कैसा संवाद स्थापित करती है और किस प्रकार पितृसत्ता और दूसरी रूढ़िवादी परंपराओं को कभी चेतावनी और कभी चुनौती देने की कोशिश करती हैं को दर्शाया है।

## मिथकों और मान्यताओं पर संवाद

आम लोगों और छात्रों में मिथकों और मान्यताओं पर संवाद बनाने के लिए मित्तिका की 'अब बाकी चर्चा' की शुरुआत की गई जिस के तहत जामिया मिलिया इस्लामिया, दीनदयाल उपाध्याय कॉलेज, हिन्दू कॉलेज तथा दिल्ली के अन्य स्कूलों और कॉलेजों में नुक्कड़ बहसों का आयोजन किया गया।

इन स्कूलों और कॉलेजों में बहुत से युवाओं ने अलग–अलग डिज़ाइनों के पोस्टर भी बनाकर लगाए जिन पर नारे लिखे हुए हैं। 'नए मर्द की नई सोच, न स्वामी न परमेश्वर पर साथी समझदार'। 'हम उन मर्दों की इज्ज़त करते हैं, जो महिलाओं की इज्ज़त करते हैं।' 'बेटों को भी कोमल और भावुक बनाएं, उन्हें भी इंसानियत सिखाएँ' – कमला भसीन के यह लिखे नारे उन्हें प्रेरित करते रहे। घरों और गलियों में युवा लेखकों, डांसर, कलाकार और अन्य युवाओं की आवाज़ फैल रही है। वे कहने लगे हैं कि मर्दानगी के सही अर्थ को समझने की मर्दानगी को महिमामंडित करने का नुकसान महिलाओं को उठाना पड़ता है। इन युवाओं के मुताबिक पुरुष और महिलाओं के बीच समानता होनी चाहिए और ये तभी संभव होगा जब महिला और पुरुष में समान साझेदारी होगी।

# महिला हिंसा का कारण मर्दवादी सोच

*भारतीय पुरुषों का मर्दानगी, पत्नी के साथ हिंसा और बेटे को प्राथमिकता जैसे मुद्दों पर क्या राय है इस सन्दर्भ में किए गए एक अंतर्राष्ट्रीय सर्वे में हैरतंगेज तथ्य सामने आए। जैसे, देश के हर दस में से छह पुरुषों ने माना कि उन्होंने अपनी पत्नी के साथ हिंसा की। उनके लिए हिंसा एक सामान्य बात है। उनकी सोच है कि परिवार को एक बनाए रखने के लिए महिलाओं को हिंसा सहन कर लेनी चाहिए। महिलाओं के प्रति पुरुषों की पारंपरिक सोच कैसे हिंसा और असमानता का कारण बनती है इसका विश्लेषण करती एक रिपोर्ट*

महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा की घटनाएँ थमने का नाम नहीं ले रहीं। उबेर टैक्सी में हुई हिंसक घटना के बाद देश के दूसरो शहरों और गाँवों में भी रेप और महिला उत्पीड़न की घटनाएँ सुनने को मिल रही हैं। महिला हिंसा और रेप के कानून में हुए संशोधन के साथ महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा को कम करने के लिए कई प्रकार के प्रशासनिक सुधार भी लागू किए गए हैं। भले ही ये उपाय पर्याप्त नहीं हैं लेकिन दिन प्रतिदिन ऐसी घटनाओं का दोहराव यह भी साबित करता है कि महज कानून का डर ही इन हिंसक वारदातों को रोकने में सक्षम नहीं।

महिलाओं के खिलाफ़ होने वाली हिंसा का सबसे बड़ा कारण है ये मर्दवादी सोच जो पुरुष को महिला से श्रेष्ठ और मर्द को ताकत का पर्याय मानती है। इस सोच के चलते ही पुरुष महिला को दबाना और उन पर हिंसक होना अपना अधिकार समझता है। पितृसत्ता समाज के ढांचे में अक्सर पुरुषों से यह अपेक्षा रहती है कि ताकत का प्रदर्शन करने वाला पुरुष ही 'असल मर्द' है।

हाल ही में जारी संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष और वाशिंगटन स्थित इंटरनेशनल सेंटर फ़ॉर रिसर्च ऑन वीमेन के संयुक्त अध्ययन के परिणाम इन तथ्यों को साबित करते हैं। यह सर्वे देश के सात राज्यों मध्यप्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र में 18 साल से 49 साल के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के 9205 पुरुषों ओर 3158 महिलाओं से की गई बातचीत पर आधारित है। सर्वे का उद्देश्य यह पता लगाना था कि भारतीय पुरुषों की मर्दानगी पत्नी के साथ हिंसा, और बेटे को प्राथमिकता के प्रति क्या राय है। इस से निकला कि भारतीय पुरुष के लिए मर्दानगी के मायने क्या हैं और वह महिलाओं के साथ उसके बर्ताव में किस प्रकार व्यक्त होते हैं और बेटे की चाहत को बढ़ाती है।

अध्ययन के मुताबिक 10 में से 6 पुरुषों ने माना है कि उन्होंने अपनी पत्नी के साथ हिंसा की है। अध्ययन में शामिल अधिकतर पुरुषों के लिए घर की महिलाओं के साथ हिंसा एक सामान्य बात है। यह सोच पुरुषों में इस कदर पैठ बनाए है कि हर दो में से एक पुरुष का मानना था कि परिवार को एक बनाए रखने के लिए महिलाओं को हिंसा सहन करनी चाहिए। बचपन में भेदभाव के माहौल में पले पुरुष पत्नी पर हिंसा करने के मामले में चार गुना आगे थे।

## सर्वे के परिणाम

ऐसे लोगों में लड़कियों और लड़कों के बीच भेदभाव करने की प्रवृत्ति अधिक होती है। लड़कों को प्राथमिकता देने और घर की लड़कियों और महिलाओं के साथ उनका बर्ताव समान न होने के कारण वे न तो बेहतर संरक्षक साबित होते हैं और न ही समाज की अपेक्षाओं पर खरे उतरते हैं। वे अन्य पुरुषों की तुलना में अधिक हिंसक साबित होते हैं।

अध्ययन के परिणामों के मुताबिक जिन क्षेत्रों में लड़कियों और महिलाओं के साथ बचपन में भदेभाव हुआ था या जहाँ लड़के और लड़कियों के अनुपात में अंतर अधिक था उन क्षेत्रों में हिंसा के मामले तीन से छह गुना अधिक हुए थे। यानी कहने का अभिप्राय, लड़कियों की कमी वाले इलाकों में अपेक्षाकृत हिंसक और उत्पीड़न की घटनाएँ अधिक होती हैं।

सर्वे के परिणामों के मुताबिक तीन में से एक पति अपनी पत्नी को उसकी इच्छा के मुताबिक कपड़े पहनने की इजाज़त नहीं देता। 66 फ़ीसदी पुरुषों का मानना था कि उनको प्रभावित करने वाले फ़ैसलों में उनकी राय अपनी पत्नी या साथी से अधिक महत्व रखती है।

75 फ़ीसदी पुरुष अपेक्षा करते हैं कि उनकी पत्नी या साथी सेक्स के लिए उनकी इच्छा के मुताबिक सहमत हो। सर्वे के मुताबिक पुरुष का अर्थ है 'सत्ता' और 'ताकत' जबकि महिलाओं को सहमति और सहनशीलता के गुण दिखाकर अपने स्त्रीत्व को साबित करना पड़ता है।

उत्तर प्रदेश में पुरुषों ने सबसे अधिक कठोर मर्दानगी के प्रति नज़रिया व्यक्त किया। मध्यप्रदेश हरियाणा और उड़ीसा में भी महिलाओं के प्रति उच्च स्तर पर नाकारात्मक विचार सामने आए। सबसे अधिक हिंसा के मामले उड़ीसा और उत्तर प्रदेश में पाए गए। सर्वे में शामिल एक तिहाई पुरुषों और महिलाओं ने बेटों के प्रति प्राथमिकता और बेटियों के प्रति भेदभाव का नज़रिया दर्शाया। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक पुत्र प्राथमिकता देखने को मिली।

## मर्दवादी पारंपरिक सोच

अंतर्राष्ट्रीय रिसर्च सेंटर फ़ॉर वीमेन के एशिया में क्षेत्रीय कार्यालय के क्षेत्रीय निदेशक रवि वर्मा के मुताबिक, "बॉलीवुड की 1983 में बनी फिल्म 'मर्द' में अमिताभ बच्चन कहता है कि 'मर्द को दर्द नहीं होता'। अफ़सोस, आज तीन दशकों के बाद भी ऐसी सोच भारतीय समाज में रची बसी है।"

सर्वे के परिणाम इसी सोच की ओर इशारा करते हैं। यह वह मर्दवादी सोच है जो महिला और पुरुषों को अलग–अलग नज़रिए से देखती है। यह सोच महिला हिंसा का सबसे बड़ा कारण है। क्योंकि यह मर्दवादी सोच हिंसक है। इस के कारण ही महिलाओं को पुरुषों से कमतर समझा जाता है और उन्हें विभिन्न प्रकार की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

वर्मा के मुताबिक सर्वे में कुछ नई और चिंताजनक प्रवृत्तियां देखने को मिलीं। उन्होंने बताया कि उन्हें उम्मीद थी कि शिक्षा और जागरूकता के साथ युवा वर्ग समानता की ओर बढ़ रहा है, लेकिन हकीकत ऐसी नहीं दिखाई दी। जैसे कि पंजाब में उन्हें ऐसे युवक मिले जो बड़े पुरुषों की अपेक्षा अपने विचारों और बर्ताव में महिलाओं और लड़कियों के प्रति अधिक कठोर थे।

उनका कहना था कि सर्वे में यह देखकर भी हैरत हुई कि युवाओं को आर्थिक विकास की मांग अधिक आक्रमक बना रही है। उनमें नियंत्रण करने की भावना भी बढ़ रही है।

महिलाओं को समानता के स्तर पर लाने में अधिकतर पुरुषों और युवाओं में स्टीरियोटाइप धारणाएँ सबसे बड़ी बाधा है। युवा लड़के भी महिलाओं और लड़कियों के प्रति वही दृष्टिकोण अपनाते हैं जो वे घर परिवार में देखते हैं।

यह मर्दवादी सोच किस प्रकार से हमारे समाज में विद्यमान है इसे जांचने के लिए मुख्यता दो मापदंड बनाए गए। पहला, कि पुरुष महिलाओं पर कितना नियंत्रण रखते हैं व कहाँ तक महिलाओं पर प्रतिबंध लगाते हैं? दूसरा, महिला समानता के प्रति पुरुषों के क्या विचार हैं? सर्वे में हुई बातचीत से स्पष्ट था कि महिलाओं के पहनावे को लेकर और घर से बाहर जाकर काम करने के मामले में पुरुषों की सोच काफ़ी रूढ़िवादी थी। इन मामलों में उनमें महिलाओं पर नियंत्रण रखने का भाव अधिक था। क्योंकि उनका मानना था कि मर्द महिलाओं से श्रेष्ठ हैं।

*महाराष्ट्र में घरेलू हिंसा के खिलाफ़ संघर्ष की योद्धा (दाईं ओर)*

*"यह लड़ाई पुरुष विरोधी नहीं"–राहुल बोस*

वर्ष 2011 की जनगणना में लड़कियों का अनुपात 927 से कम होकर 918 हो गया है। अध्ययन में एक–तिहाई पुरुष और महिलाओं ने बेटे को प्राथमिकता देने के विचार व्यक्त किए।

इस बात में कोई संदेह नहीं कि पारंपरिक मर्दवादी सोच हिंसा और पुरुषों में लड़के को प्राथमिकता की प्रवृति को बढ़ावा देती है। इसलिए अगर महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा को खत्म करना है तो पारंपरिक मर्दवादी सोच को बदलना होगा। उसके लिए महिला अधिकारों के अभियानों में पुरुषों को जोड़ना होगा।

मर्दवादी अध्ययन ऐसी नीतियों को बनाने की सिफ़ारिश करता है जिससे पुरुषों का विश्वास बढ़े और उनका आर्थिक तनाव कम हो क्योंकि सर्वे बताती है कि आर्थिक परेशानी महिलाओं के खिलाफ़ हिंसक होने और बेटे की चाह को बढ़ाती है। इसके अलावा युवा लड़कों में ऐसी सोच को विकसित करना है जो ताकत या सत्ता की अपेक्षा समानता पर आधारित हो।

इस रूढ़िवादी धारणाओं को खत्म करने के संदर्भ में अभिनेता राहुल बोस का कहना है कि लड़कों को अपनी शादी में क्या पहनना है या उन्हें पढ़ाई में कौन से विषय लेने चाहिए ऐसी बातें पिता के बजाए माँ से पूछनी होंगी। इसके अलावा लड़के 'बंदूक से ही खेलते हैं', 'लड़के लड़कियों की तरह रोते नहीं', ऐसी मान्यताओं का विरोध करना होगा।

राहुल बोस के मुताबिक निजी स्तर पर जागरूकता के अलावा संस्थानों जैसे स्कूलों इत्यादि में कड़े बदलाव लाने की ज़रूरत है। उनका मानना है कि जिन परिवारों में महिलाएँ या लड़कियां हिंसा झेल चुकी हैं उन परिवारों के मर्दों तक पहुंचने की ज़रूरत है। यही नहीं, उनकी पीड़ा को समझ कर उसे कम करने के तरीकों पर भी सोचना होगा।

यह लड़ाई पुरुष विरोधी नहीं, उस पुरुष सत्ता के खिलाफ़ है जो महिला को दबाना चाहती है।

# महिलाओं के सम्मान की अनोखी पहल

*देश में ऑटो चालकों की बदली सोच*

राजधानी दिल्ली में रहने वाली मेरी एक सहेली ने अपनी बेटी को समझा रखा है कि जब भी वह किसी ऑटो में बैठे पहले उसका नंबर नोट कर उसे एसएमएस करे। उसका मानना है कि ऑटो में सफ़र करना सब से असुरक्षित है खास कर शाम और रात के समय। मुंबई में रहने वाली मेरी एक अन्य परिचिता ने अपनी कॉलेज जाने वाली बेटी को ऑटों में बैठने से पूरी तरह मना कर रखा है। एक दो बार जब उसे मजबूरी में ऑटो में बैठना भी पड़ा तो वह लगातार फ़ोन पर माँ से बात करती रही।

दिल्ली सहित अधिकतर महानगरों में बस और मेट्रो के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए ऑटो का सब से अधिक इस्तेमाल होता है। लेकिन महिलाओं में यह सब से अधिक असुरक्षित माना जाता है। महिलाओं का यह डर नाहक नहीं है, आए दिन मीडिया में ऑटो में सवार महिलाओं से हुई छेड़खानी ओर उत्पीड़न की घटनाएँ इस बात का संकेत है कि ऑटो ड्राईवरों को महिलाओं के प्रति संवेदनशील और जागरूक बनाने की ज़रूरत है।

इंटरनेशन सेंटर फ़ॉर रिसर्च ऑन वीमेन संस्था द्वारा दिल्ली में कराए गए एक सर्वे में पाया गया कि 90 फ़ीसदी महिलाओं ओर लड़कियों ने माना कि शहर के सार्वजनिक स्थानों पर वे किसी न किसी समय में हिंसा का शिकार हुई हैं। 60 फ़ीसदी अंधेरे में बाहर जाने से डरती हैं। 20 फ़ीसदी का कहना है कि वे अकेले कहीं नहीं जाती।

लेकिन सड़कों को सुरक्षित बनाने के प्रति अब वाहन चालकों में बदलाव नज़र आ रहा है। राजधानी दिल्ली के ऑटो चालकों में महिलाओं को सम्मान देने और उनके प्रति मानसिकता को बदलने की एक नई सोच पनप रही है। महिलाओं के लिए सड़कों को सुरक्षित बनाने के उद्देश्य से शुरू किए गए इस प्रोग्राम से अब तक चालीस हजार से अधिक ऑटो चालक जुड़ चुके हैं। दिल्ली के रोहिणी इलाके में रहने वाले चक्रधारी पाण्डेय का कहना है कि पिछले कुछ समय में उनमें महिलाओं के प्रति सोच में बदलाव आया है। वह कहते हैं कि अब केवल अपने घर में ही वह महिलाओं का सम्मान नहीं करते बल्कि महिला सवारियों की सुरक्षा के प्रति वह खास सचेत रहते हैं। यही सीख वह अपने इलाके में रहने वाले ऑटो चलाने वालों को देते हैं। उनके ऑटो पर एक बड़ा सा स्टिकर लगा है "यह ज़िम्मेदार ऑटोरिक्शा करती है महिलाओं का सम्मान और सुरक्षा"। अपने ऑटो पर लगे एक दूसरे छोटे स्टिकर जिस पर बड़े–बड़े शब्दों में लिखा है "मेरा ईमान महिलाओं का सम्मान" को दिखाते हुए चक्रधारी पाण्डेय कहते हैं कि वह न केवल खुद इस बात को मानते हैं बल्कि अन्य साथियों को भी यही समझाते हैं।

महिलाओं का सम्मान क्यों और कैसे होना चाहिए? ऑटो चलाने वालों को यह बात सिखाने और उनकी महिलाओं के प्रति मानसिकता को बदलने का यह काम दिल्ली की मानसिक संस्था मनस फ़ाउंडेशन कर रही है।

मनस की प्रोग्राम ट्रेनर स्मिता तिवारी ने बताया कि अधिकतर महिलाओं और लड़कियों में ऑटो में बैठने में एक डर सा रहता है। निर्भया हादसे के बाद यह डर और झिझक और बढ़ा है। "हम ऑटो चलाने वालों को ट्रेनिंग के माध्यम से उन्हें महिलाओं के प्रति संवेदनशील बना कर उनकी छवि को बदलना चाहते हैं", वे कहती है।

दिल्ली ट्रांसपोर्ट ऑथोरिटी की मदद से यह संस्था राजधानी के प्राइवेट ड्राईवर ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट में ट्रेनिंग कक्षाएँ चलाती है। ऑटो वाले जब अपना आवश्यक वार्षिक टेस्ट देने के लिए इन केंद्रों में एकत्रित होते हैं तो उन्हें सर्टिफ़िकेट प्राप्त करने के लिए स्वास्थ्य और महिलाओं की सुरक्षा की ट्रेनिंग भी लेनी पड़ती है। एक दिन में दो सेशन होते हैं। इनमें उन्हें घरेलू हिंसा, छेड़खानी या रेप जैसी समस्याओं से महिलाओं की रक्षा के संदर्भ में समझाया जाता है। ट्रेनिंग में सोशल रिस्पांसबिलिटी, प्रोफ़ेशनालिस्म, इम्पेथी एंड केयर यानी सामाजिक ज़िम्मेदारी, व्यावसायिकता, सहानुभूति और देखभाल के दृष्टिकोण को अपनाने की समझ बनाने की कोशिश की जाती है।

प्रति दिन करीब 150 से 200 ड्राईवर यह ट्रेनिंग लेते हैं। जनवरी 2014 से शुरू हुए इस प्रोग्राम में चक्रधारी पाण्डेय सहित अभी तक 40 हजार के करीब ऑटो डाईवर यह ट्रेनिंग हासिल कर चुके हैं। प्रोग्राम का उद्देश्य एक लाख बीस हज़ार ड्राईवरों को एक वर्ष में यह ट्रेनिंग देना है।

महिलाओं और लड़कियों के लिए सड़कों को सुरक्षित बनाने के मकसद से विश्व के कुछ शहरों में सेफ़ सिटी बनाने का प्रोग्राम शुरू हुआ है। भारत के कुछ बड़े शहरों में यू.एन वीमेन की मदद से वर्ष 2010 में 'ग्लोबल प्रोग्राम ऑफ़ सेफ़ सिटी' की शुरुआत की गई। इस का मकसद सड़कों को महिला हिंसा से सुरक्षित बनाना है। यू.एन वीमेन की भारतीय प्रतिनिधि रिबेका टेवेर्से का कहना है कि महिला सबलता और निजी सुरक्षा के मुद्दे का जुड़ाव सेफ़ सिटी से हट कर नहीं। विश्व के 3.4 अरब लोग शहरों में रहते हैं। शहरीकरण के बढ़ने से महिलाओं और बच्चों के लिए खतरे भी बढ़े हैं। इन खतरों को कम करना ज़रूरी है।

भारत में इस प्रोग्राम के तहत केरल राज्य के 1243 ट्रांसपोर्ट विभागों की मदद से चालकों और कंडकटरों को महिला हिंसा के खिलाफ़ प्रशिक्षण दिए गए। वर्ष 2012 में मुंबई और बंगलूरु में चालकों को महिला हिंसा के प्रति संवेदनशील बनाने के मकसद से अलग–अलग प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किए गए। दिल्ली में महिला संस्था जागोरी ने अलग–अलग समुदाय के पुरुषों को 'मर्दानगी' से जुड़े दकियानुसी मायनों को त्यागने और वास्तविक मायने समझाने के साथ महिला समानता के सवाल पर पुरुषों को जोड़ने की शुरुआत की है। इसके लिए अलग–अलग प्रकार के प्रशिक्षण मॉड्यूल अपनाए जा रहे हैं।

*दिल्ली में ट्रेनिंग के बाद एक ऑटो–चालक*

स्मिता तिवारी के मुताबिक ऑटो चालकों को प्रशिक्षण के दौरान यह बताया जाता है कि जब कोई महिला सवारी ऑटो में चढ़ती है तो उनका लक्ष्य होता है एक स्थान से दूसरे स्थान तक सुरक्षित पहुंचना और यह ऑटोवाले की मदद से ही संभव हो सकता है। "हम उन्हें 'गेट कीपर' का काम करने की सीख देते हैं। जिनके पास महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान की स्थिति बदलने की क्षमता है।"

स्मिता के मुताबिक, "शुरू में यह कठिन लगा क्योंकि बहुत से ऑटो वालों का सवाल रहता कि उन्हें ही यह क्यों समझाया जा रहा है, या कई पूछते कि जब महिला सवारी उनके साथ गुस्से या बदतमीज़ी से पेश आए तो वे क्या करें। फिर हमने उन्हें सवारी का विश्वास जीतने और उनके साथ नम्रता से बात करने के फ़ायदे समझाए।" इसके अलावा, "हम उन्हें शहर में बढ़ते बलात्कार के मामलों के बारे में बताते हैं और उदाहरणों से बताते हैं कि वे इन्हें रोकने में कैसे मदद कर सकते हैं। हिंसा बढ़ने से टूरिज़्म पर भी असर पड़ेगा और इससे उनकी आमदनी भी कम होगी।"

मनस की ओर से ऑटो चलाने वालों के लिए 'ऑटो सहारा हेल्पलाइन' भी शुरू की गई है, जिस में वे किसी भी महिला के साथ हिंसा से संबंधित या सड़कों की सुरक्षा के प्रति किसी भी घटना या समस्या के बारे में बात कर सकते हैं। इस हेल्पलाइन के माध्यम से वे अपनी समस्याओं पर भी बात कर सकते हैं।

क्या इस प्रशिक्षण से कोई बदलाव की उम्मीद है? इस सवाल पर चक्रधारी कहते है, "क्यों नहीं? मानसिकता बदल रही है। मुझ में और मरे बहुत से साथियों में महिला सवारियों के प्रति बर्ताव बदला है। जब आप अपने ऑटो पर महिला सम्मान की बात लिखते हैं तो आप खुद को नहीं बहुत से अन्य लोगों को भी यह सीख देते हैं।"

# विज्ञापन में महिलाओं की बदली छवि

*विज्ञापनों में महिलाओं को या तो बेहद पारंपरिक, खाना बनाने वाली सुघड़, सुशील महिला के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है या फिर सेक्स ऑब्जेक्ट के रूप में, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में विज्ञापनों में बदलाव आया है। अब विज्ञापन कंपनियाँ भी सफ़ल, सबल और ऊँचे मुकामों पर पहुँची महिलाओं को दिखाकर लाखों महिलाओं तक पहुँच बना रही हैं जो बदलते दौर में घर, करियर और समाज में नए आयाम स्थापित कर रही हैं*

विज्ञापनों ने हमेशा महिलाओं को कमोडिटी की तरह इस्तेमाल किया है। मार्किट मैनेजर अक्सर महिलाओं को ऑब्जेक्ट के रूप में प्रस्तुत करते रहे हैं जो कुछ भी बेचने का सामर्थ्य रखती हैं, भले ही वह महिला के इस्तेमाल की चीज़ न हो। सीमेंट से लेकर शेविंग क्रीम तक बेचने के लिए महिला मॉडल विज्ञापन कंपनियों की प्रथम पसंद रही हैं। गोरा होने की क्रीम से लेकर पुरुषों के अंतरवस्त्र बेचने में महिला को ही अधिक सक्षम माना गया है।

इन सबके पीछे यह सोच काम करती रही कि महिलाएँ घर को संभालने का काम करती हैं इसलिए अधिकतर उत्पादों को बेचने के लिए महिलाओं को आकर्षित करना ज़रूरी है और अगर कोई महिला मॉडल उस उत्पाद को बेचे तो उसका असर अधिक होगा। इस प्रवृत्ति ने विज्ञापनों में महिलाओं के आपत्तिजनक प्रस्तुति को प्रोत्साहित किया। वह प्रेशर कुकर से लेकर पुरुषों के परफ़्यूम और मोटरबाइक के विज्ञापनों में भी दिखाई देने लगीं। इस प्रवृत्ति के कारण घर और पति से अलग हट कर वास्तविक जीवन की एक सफ़ल और सशक्त महिला इन विज्ञापनों का हिस्सा न बन पाई।

*"कंपनियाँ अपनी छवि बदल रही हैं" – संतोष देसाई*

लेकिन पिछले कुछ वर्षों से विज्ञापनों की महिलाओं में भी कुछ बदलाव नज़र आ रहा है। घर में ऑफ़िस और ऑफ़िस से बोर्डरूम तक पहुंची महिलाओं की उपेक्षा करना अब विज्ञापनदाताओं को भी शाायद फ़ायदेमंद महसूस नहीं हो रहा।

पिछले दिनों एयरटेल ने अपने एक विज्ञापन में महिलाओं की प्रगतिशील छवि को दर्शाया। इस विज्ञापन में एक महिला ऑफ़िस में बैठे अपने जूनियर सहकर्मी को समय सीमा के भीतर काम खत्म करने का निर्देश देती है। कुछ आनाकानी करने के बाद वह समय पर काम खत्म करने पर मान जाता है। रात होते ही महिला बॉस घर के लिए रवाना होती है। रास्ते में वह अपने पति से खाने में कौन सी डिश खाएगा पूछने के लिए कॉल करती है। खाना तैयार कर वह फिर पति को फोन करती है कि उसने चार स्वादिष्ट पकवान बनाए हैं इसलिए वह जल्द घर आ जाए। इस सीन में दिखाया जाता है कि वह पति कोई और नहीं बल्कि उसका जूनियर सहकर्मी ही है। इस विज्ञापन में पहली बार पत्नी को बॉस के रूप में प्रस्तुत किया गया। लेकिन इस विज्ञापन पर भी विवाद खड़ा हो गया। महिला अधिकारों के पक्षधरों में दो कारणों से इसकी आलोचना हुई। पहला, कि महिलाओं को करियर में सफ़ल और बॉस के रूप में प्रदर्शित करने वाले विज्ञापन में भी आखिर उसके घर में खाना बनाने की भूमिका को महत्व दिया गया। दूसरा, इसमें भी स्टीरियोटाइप धारणा की पुरुषों का दिल जीतने का रास्ता पेट से जाता है, को प्रोत्साहित किया गया था।

'फ़्यूचर ब्रांड लिमिटेड' के विज्ञापन विशेषज्ञ संतोष देसाई के मुताबिक, "यह पहली बार है कि किसी पत्नी को बॉस के रूप में प्रदर्शित किया गया

है सो उस पर चर्चा होना स्वाभाविक है और यह एक सकारात्मक पहलू है।" विज्ञापन के समर्थकों का मानना है कि यह महिला पर निर्भर है कि वह किस प्रकार से आज़ाद महसूस करती है। यानी वह क्या करना चाहती है और कितने प्रकार की भूमिका निभाना चाहती है। अगर वह बॉस रह कर पति के लिए उसका पसंदीदा खाना बनाना चाहती है तो उसमें उसकी खुशी और पसंद का सवाल है। इसमें गलत क्या है? यह तर्क साबित करता है कि महिलाओं को उनकी भूमिका खुद तय करने की आज़ादी और अधिकार होना ज़रूरी है।

इस बात में दो राय नहीं कि महिलाओं के नज़रिए से विज्ञापन बदल रहे हैं भले ही वे पूरी तरह से दोषरहित नहीं। लेकिन फिर भी बदलाव आ रहा है। संतोष देसाई के मुताबिक, "हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विज्ञापनदाता का वास्तविक मकसद प्रोडक्ट बेचना है सोशल संदेश देना नही। उनकी मार्केटिंग रणनीति है कि पहले किसी चीज़ के प्रति कमी पैदा करो और फिर उस कमी के अहसास को भुनाओ। यह उनका मुख्य मंत्र होता है। इस मंत्र के आस–पास ही विज्ञापन का विचार घूमता है।"

इंटरनेशनल एडवरटाइज़िंग एसोसिएशन की दिसंबर 2014 में 'भारतीय विज्ञापनों में महिलाओं के प्रस्तुतिकरण की बदलती प्रवृति' पर जारी किए एक सर्वे के मुताबिक महिलाओं का काम के स्थान पर महत्व बढ़ा है। वे बहुत महत्वकांक्षी हैं और अपने

*हैवल के एक प्रगतिशील विज्ञापन की झलक*

प्रोफ़ेशन में स्वयं को साबित करने में सफल रही हैं। दिल्ली, चेन्नई और मुंबई के कुल 55 एडवरटाइज़िंग कंपनियों और 39 मार्केटिंग प्रोफ़ेशनल के बीच किए गए इस सर्वे के परिणामों के मुताबिक अब विज्ञापनों में महिलाओं का रोल बदला है। अब वे विज्ञापनों में कई भूमिकाएँ निभाने वाली, अधिक आत्मविश्वासी, प्रोफ़ेशनल, आधुनिक और सशक्त महिला के रूप में दिखाई जाती हैं, सर्वे में 91 प्रतिशत लोगों ने माना कि विज्ञापनों में यह बदलाव साकारात्मक है और उन्हें पसंद आ रहा है।

पिछले दिनों ऐसे कई विज्ञापन देखने को मिले जो महिलाओं के अधिकारों की वकालत करते नज़र आए, भारत मैट्रिमोनियल के विज्ञापन में पुरुष महिला के अधिकारों की सुरक्षा की बात करता है। हैवल के विज्ञापनों की शृंखला 'हवा बदलेगी' का हर विज्ञापन महिला के अधिकार और समानता का प्रचार करता है। एक विज्ञापन में रजिस्ट्रार के ऑफ़िस में बैठा पुरुष शादी के बाद पत्नी का सरनेम रखना चाहता है।

एक में नौकरानी को परिवार के लोग डाइनिंग टेबल पर साथ बैठ खाना खाने के लिए कहते हैं। एक अन्य विज्ञापन में यह कहा जाना कि 'महिला कोई किचन उपकरण नहीं, महिला का सम्मान करो' यह साबित करता है कि महिलाओं के नज़रिए से विज्ञापन की कॉपी बदल रही है। बिग बाज़ार के विज्ञापन में लड़की का अपने पिता को अपने पहले वेतन में से तोहफ़ा देना लड़कियों के महत्व को प्रोत्साहित करता नज़र आता है। एक अन्य स्मार्ट फ़ोन का विज्ञापन दिखाता है कि एक लड़की अपने ऑफ़िस के खर्चे से बाहर कहीं पहाड़ी स्थान पर जाकर बड़े से होटल में ठहरती है। वहाँ से वह घर बैठे अपने माँ–बाप को फ़ोन की मदद से पहाड़ का नज़ारा दिखाती है। यहाँ भी एक लड़की की आत्मनिर्भरता और उसकी आर्थिक तरक्की को केंद्र में रखा गया है।

कुल मिलाकर विज्ञापनों की दुनिया में महिलाओं के प्रस्तुतिकरण में प्रगतिशीलता दिखाई दे रही है। कुछ विज्ञापन महिला अधिकारों को प्रोत्साहित करने के चलते चर्चित भी हो रहे हैं जैसे 'तनिष्क' में विधवा का पुनः विवाह। विज्ञापनों में बदलती यह प्रवृति इस बात का संकेत है कि भले ही एडवरटाइज़िंग इंडस्ट्री में पुरुषों का वर्चस्व है लेकिन विज्ञापन की दुनिया में अब महिलाओं की छवि बदल रही है।

# साझेदारी से बन रही है बात - गाँवों में महिला-समानता में पुरुषों की बढ़ी भागीदारी

*मर्दानगी का अर्थ न तो ताकत से है ना ही मर्दों और महिलाओं के काम के बँटवारे से। देश के कुछ राज्यों में इस शब्द के पारंपरिक मायने बदल रहे हैं। ताकत और सत्ता की संकीर्ण सोच से हटकर पुरुष महिलाओं का हर स्तर पर बराबर साथ दे रहे हैं*

कहते हैं महिलाओं को सबल बनाने के लिए उन्हें शिक्षित और जागरूक बनाना ज़रूरी है। उनके अधिकारों को पाने के लिए कानून भी ज़रूरी है लेकिन क्या केवल उन्हें जागरूक और सबल बना कर उन पर होने वाली हिंसा और शोषण को कम किया जा सकता है? क्या महिला हिंसा के खिलाफ़ दी जाने वाली सीखों में उन लोगों का शामिल होना ज़रूरी नहीं जो इस हिंसा का कारण भी हैं? क्या सत्ता और ताकत के फ़ायदे और नुकसान के पाठ में उनकी भागीदारी के बिना महिला समानता और न्याय का उद्देश्य हासिल हो सकता है?

हकीकत तो यह है कि पुरुष्त्व के सही मायनों को समझने और पितृसत्ता के दकियानूसी परंपराओं को बदले बिना न महिलाएँ सशक्त हो सकती हैं और न ही समानता का मकसद पूरा हो सकता है। महिला अधिकारों के संघर्ष के अनुभवों से यह साबित हो चुका है कि समानता या बराबरी के हक की बात अब पुरुषों के साझेदारी और उनकी भागीदारी के बिना नहीं होगी।

*सीधी ज़िले में स्वास्थ्य हकदारी अभियान में पुरुषों की रैली*

इसी बात को ध्यान में रखते हुए देश के कुछ राज्यों मे महिलाओं की स्थिति बदलने के लिए पुरुषों और महिलाओं द्वारा ऐसी मुहिम चलाई जा रही है जिससे पुरुष घर–परिवार और महिलाओं के स्वास्थ्य की देखभाल के प्रति ज़िम्मेदारियों का न केवल स्वयं पालन करते हैं बल्कि गाँवों के अन्य पुरुषों को भी यही सीख देते हैं।

देश के कई गाँवों में पुरुषों के ऐसे समूह बन रहे हैं जो पितृसत्ता की बुराइयों को खत्म करने और महिलाओं के खिलाफ़ होने वाली हिंसा का विरोध करने में बढ़–चढ़ कर हिस्सा ले रहे हैं। ये पुरुष घर में बच्चों की देखभाल और घर के कामों की ज़िम्मेदारियों को सँभालते हैं। यौन और प्रजनन स्वास्थ्य की हकीकत को समझ कर उसमें घर की महिलाओं का न केवल साथ देते हैं बल्कि अपने क्षेत्र के अन्य पुरुषों में भी ऐसी जागरूकता फैलाते हैं। इन में से अधिकतर वे पुरुष हैं जो कुछ साल पहले तक घर और बच्चों की ज़िम्मेदारी को महिलाओं का काम समझते थे। महिलाओं की बीमारी और बच्चे पैदा करने से लेकर उनके लालन–पालन को महिलाओं की ज़िम्मेदारी ही मानते थे। पुरुष प्रधान समाज की परंपराओं के तहत उनका मुख्य चिंता बस घर की कमाई तक सीमित थी।

मध्यप्रदेश के करीब 30 गाँवों में वर्ष 2012 में राजधानी दिल्ली की संस्था सेंटर फ़ॉर हेल्थ एंड सोशल जस्टिस ने 'साझेदार' नाम का एक ऐसा कार्यक्रम शुरू किया है जिस के तहत पुरुषों को पुरुष की पारंपरिक भूमिका से निकल कर अपनी पत्नियों की मदद करने की सीख दी जा रही है।

मुरैना ज़िले के 15 गाँवों और सीधी ज़िले के 14 गाँवों में साझेदार योजना के तहत प्रशिक्षण पाकर बहुत से पुरुषों के बर्ताव में बदलाव नज़र आ रहा है। उनके लिए 'मर्दानगी' के मायने बदल गए हैं। अब वे मर्दानगी को महिला पर हाथ उठाना नहीं उसे रोकना मानते हैं। जिन पुरुषों की दिनचर्या गाँव में पत्तों खेलने से शुरू होती थी अब उन्हें घर, बच्चों

और पत्नी के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास हो गया है।

मुरैना से मात्र 22 मिलोमीटर दूर गाँव रथोल के पुरा में रहने वाली केता दो साल पहले तक काफ़ी दुखी थी। उसके चार बच्चे हैं। सभी स्कूल जाते हैं। केता का पति जितेन्द्र सारा दिन दोस्तों के साथ पत्ते खेलता था या गप्पें लगाने में बिता देता। केता कपड़े धोने से लेकर घर के सारे काम निपटाती फिर पशुओं की देखभाल और पानी भरने की ज़िम्मेदारी भी उसी पर थी। दिन भर के कामों को अकेले सँभालने के कारण केता का स्वास्थ्य भी बिगड़ गया। लेकिन दसवीं कक्षा पास होने के बावजूद जितेन्द्र ने उसकी कभी परवाह न की। दो साल पहले गाँव में जब साझेदार योजना के तहत पुरुषों का समूह बनाया गया तो जितेन्द्र भी समय बिताने उसमें गया। जितेन्द्र के मुताबिक, "मैं सोचता था कि पुरुषों और महिलाओं का काम अलग–अलग होता है। लेकिन समूह की बैठकों से मुझे पता चला कि अगर घर के कामों में हम मदद करेंगे तो हमारी पत्नियों के पास भी अपने लिए और हमारे लिए समय बचेगा। मैंनु पशुओं की देखभाल का काम अपने ज़िम्मे ले लिया। मेरी पत्नी खुश है। अब वह मेरे साथ समय बिताती है।"

मुरैना के भटारी गाँव में रहने वाले अनारसिंह, अशोक बेताल सिंह और गजेंद्र सिंह खेती और पशु पालने का काम करते हैं। उसी से परिवार का खर्चा चलता है। पशुओं की देखभाल और खेती के काम को खत्म करते ही ये सभी घर के बाहर मिलकर पत्ते खेलते रहते थे। उनकी पत्नियाँ बच्चों के टीकाकरण कराना और बीमारी होने पर स्वास्थ्य केंद्र के चक्कर लगाना जैसे कामों में हमेशा व्यस्त रहती थीं। इन सभी पुरुषों का मानना था कि ये सभी काम महिलाओं के हैं। लेकिन जब गाँव में समूह बने, उन्हें पता चला कि साझेदारी यानी पुरुष और महिला की हर काम में भागीदारी ही घर की खुशहाली का कारण है। अनारसिंह के मुताबिक, "हम सब साथी भी घर के कामों पर ध्यान देने लगे, जिससे हमारे घर के माहौल में बदलाव आने लगा।" भटारी गाँव के ये मर्द अब गाँव के आरोग्य केंद्र में दवाईयों की आपूर्ति पर ध्यान देते हैं। 'आशा' के आने के दिनों की जानकारी लेते हैं। जब पत्नियाँ कामों में व्यस्त होती हैं तो बच्चों के साथ समय बिताते हैं। उनके टीकाकरण का ध्यान रखते हैं।

सीधी ज़िले के गाँव सलैहा का उर्मिला प्रसाद 28 वर्ष का है। वह अपनी 24 साल की पत्नी सुनीता से बेहद कम बात कर पाता। संयुक्त परिवार में रहने के कारण वह घर के कामों में भी उसकी मदद नहीं कर पाता, क्योंकि उसे लगता है कि उसके परिवार वाले क्या कहेंगे। जब वह गाँव के स्वास्थ्य समूह से जुड़ा तो उसमें समझ बनी कि परिवार को स्वस्थ रखने के लिए उसे न केवल घर के कामों में हाथ बटाना होगा बल्कि सभी स्वास्थ्य सेवाओं की जानकारी भी लेनी होगी। कार्यक्रम से जुड़ने के दौरान उसकी पत्नी गर्भवती हुई तो उसने दूर शहर सीधी लेजाकर उसकी जांच कराई। उसे ज़रूरी टीके लगवाए। स्वास्थ्य केंद्र में उसका प्रसव कराया। बेटी होने पर उसके नामकरण का जश्न भी मनाया। बेटी को टीके कब और कैसे लगेंगे उसे इसकी पूरी जानकारी है। उर्मिला प्रसाद के मुताबिक, "मैंने समूह से जुड़ने के बाद सोचा कि जो काम मैं खुद नहीं करता उसे दूसरों को करने के लिए कैसे कहूँ। इसलिए मैंने पहले अपने आप में यह बदलाव लाया। आज मैं सब को यह बात समझाता हूँ कि जैसे मैंने घर की ज़िम्मेदारी को समझ कर घर में खुशी लाई वैसे वे भी अपनी पुरुष प्रधान वाली मानसिकता बदल कर सदा के लए खुशी हासिल कर सकते हैं।"

साझेदार योजना के तहत गाँव के कुछ पुरुषों को चयनित कर उन्हें पंचायतों और स्वास्थ्य समितियों

### पत्नी के बजाए भगवती ने लिया ऑपरेशन का फ़ैसला

मध्यप्रदेश के मुरैना ज़िले के गाँव भटारा के भगवती ने फ़ैसला लिया की वह अपनी पत्नी के बजाए खुद नसबंदी का ऑपरेशन कराएगा। वह कहता है कि वह समझ चुका है कि महिला से अधिक पुरुष नसबंदी का ऑपरेशन सरल होता है। महिलाओं को ऑपरेशन के बाद घर के काम करने में अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है। भगवती के मुताबिक गाँव में बने साझेदार समूह में जाने से उसकी जानकारी बढ़ी और वह यह समझने लगा कि उसकी पत्नी और बच्चे उसकी भी ज़िम्मेदारी हैं। अब वह पत्नी के साथ घूमने जाता है। उन्हें समय देता है। वह कहता है, "जब तक मैं नसबंदी नहीं कराता तब तक मैं गर्भ निरोधक का इस्तेमाल करूँगा। इससे संबंधित जानकारी अब मैं गाँवों के अन्य लोगों को भी देता हूँ।" गाँव के बहुत से पुरुष अब महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हैं और अब उन्हें समय देते हैं।

से जोड़ा गया। इन पुरुषों को 'एनिमेटर' का नाम दिया गया और उन्हें गाँव में चलने वाली योजनाओं की जानकारी, उनका संचालन करने का तरीका, महिलाओं के स्वास्थ्य से जुड़े सवाल, मर्दानगी से जुड़े मिथ और उसके सही मायनों और घर परिवार की ज़िम्मेदारियों को समझने और उसके नफ़े नुकसान से अवगत कराया गया।

योजना को लागू करने से पहले परिवारों की सोच को जानने के लिए की गई सर्वे में पाया गया कि मुरैना में 14 फ़ीसदी और सीधी में केवल 5 फ़ीसदी पुरुष कार्यक्रम लागू होने से पहले पुरुष–महिला समानता की बात समझते थे, लेकिन योजना लागू होने के करीब तीन सालों के बाद की गई सर्वे में ऐसे पुरुषों की संख्या सीधी में 51 फ़ीसदी और मुरैना में 70 फ़ीसदी हो गई। एक तिहाई से अधिक पुरुषों ने माना कि उन्होंने पहली बार घर के कामों जैसे कपड़े धोना, सफ़ाई करना या फिर बच्चों की देखभाल में भागीदारी की है। सर्वे के परिणामों से स्पष्ट हुआ कि महिलाओं के स्वास्थ्य खास कर प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति और ज़िम्मेदार बाप बनने वाले पुरुषों की गिनती बढ़ी है। बहुत से पुरुषों की कहानियों से यह भी साफ़ होता है कि निजी और सामुदायिक स्तर के सहयोग से पुरुषों में जो बदलाव आ रहा है उससे निकट भविष्य में सामाजिक बदलाव संभव है।

पिछले कुछ सालों से महिलाओं के प्रति पुरुषों की सोच बदलने के लिए देश के अलग–अलग राज्यों में साझेदार जैसे कई कार्यक्रम शुरू किए गए हैं जिससे 'पुरुषत्व' या 'मर्दानगी' को बंधे–बंधाए खांचों से अलग हटकर उनके उचित और सार्थक मायने प्रचारित हो सकें।

'नए मर्द की नई सोच', 'न स्वामी, न परमेश्वर पर साथी समझदार', और 'महिलाओं के लिए असली मर्द वही जो हिंसा करता नहीं, हिंसा का विरोध करता है,' जैसे जुमले लोगों की जंग खाई मानसिकता पर प्रहार कर रहे हैं।

उत्तर प्रदेश में 'मेन एक्शन फ़ॉर स्टॉपिंग वायलेंस अगेंस्ट वीमेन' यानी 'मासवा' शुरू किया गया। इस प्रोग्राम के तहत गाँव के अलग–अलग समुदायों से बातचीत कर उत्तर प्रदेश में कुछ ऐसे पुरुष तैयार किए गए जो हिंसा को रोकने और यौन और प्रजनन स्वास्थ्य के मुद्दे पर बात करने और उसके प्रति फैली भ्रांतियों को दूर करने में रूचि रखते हैं।

इस कार्यक्रम के तहत महिलाओं के प्रति स्टीरियोटाइप मान्यताओं और पुरुष की 'मर्दवादी' सोच को बदलने की कोशिश की जा रही है। पिछले करीब पांच–छह साल काम करने के बाद अब यहाँ कुछ बदलाव नज़र आ रहा है। अब यहाँ के कुछ गाँवों के पुरुष छोटी उम्र की शादियों को रोकना, लड़की के जन्मदिन को मनाना और किशोरियों को स्कूल भेजने जैसे मुद्दों पर सक्रिय हो रहे हैं। इन क्षेत्रों में समानता और सत्ता के मुद्दों पर संवाद बढ़ा है और बहस कायम हो सकी है। लैंगिकता, मर्दानगी जैसे मुद्दों पर पुरुषों की मानसिकता पुराने और पारंपरिक विचारों से बदल कर समानता की ओर बनी है।

सेंटर फ़ॉर हेल्थ एंड सोशल जस्टिस संस्था ने पुरुषों की सोच में बदलाव के मकसद से देश के चार राज्यों झारखंड, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में 'केयरिंग फ़ादर' का कार्यक्रम भी शुरू किया। इसी तरह महाराष्ट्र में 'समजदार जोड़ीदार' नाम का प्रयास पुरातन और रूढ़िवादी परंपराओं को धक्का देते हुए महिलाओं के हक में माहौल बनाने की कोशिश कर रहा है।

*मुरैना के एक गाँव में साझेदार योजना के तहत लड़कों और पुरुषों का समूह*

## लेखक परिचय

**अन्नू आनंद** पिछले 25 सालों से पत्रकारिता में सक्रिय है। बेंगलोर से निकलने वाले पहले दैनिक हिंदी समाचार पत्र में राजनैतिक संवाददाता से सफ़र चलता हुआ दिल्ली के विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में रिपोर्टर से लेकर अन्य संपादकीय ज़िम्मेदारियों को निभाते हुए 1999 में प्रेस इंस्टीट्यूट ऑफ़ इंडिया में दस साल तक बतौर संपादक रही। सामाजिक और विकास के मुद्दों पर मुख्य लेखन किया। प्रिंट मीडिया में कॉलम, आलेख और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में विचारात्मक प्रस्तुति जारी है। इसके अलावा पत्रकारिता में शिक्षण, प्रशिक्षण और ग्रासरूट स्तर पर संवाद बनाने में निंरतर प्रयासरत है। सर्वश्रेष्ठ फ़ीचर लेखन के राष्ट्रीय यूनएनएफपीए–लाडली मीडिया अवार्ड, कलम के सिपाही और राष्ट्रीय विकास पत्रकारिता ठाकुर वेदराम पुरस्कार के लिए पुरस्कृत।

Men and Boys for Gender Justice

2nd MenEngage
Global Symposium 2014


अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें –

**सेन्टर फॉर हेल्थ एण्ड सोशल जस्टिस**

बेसमेंट ऑफ़ यंग वूमेंन हॉस्टल नं. 2, एवेन्यू 21, जी ब्लॉक, साकेत, नई दिल्ली–110017

फोनः 91–11–26511425, 26535203; टेलीफैक्सः 91–11–26536041

ईमेलः chsj@chsj.org वेबसाइटः www.chsj.org; www.menengagedilli2014.net